UGC Approved Journal
- Research Link

Since March 2002

An International, Registered & Referred Monthly Journal : Sociology
Research Link - 160, Vol - XVI (5), July - 2017, Page No. 52-54
ISSN - 0973-1628 ■ RNI - MPHIN-2002-7041 ■ Impact Factor - 2015 - 2.782

राजनीतिक समाजीकरण का अवधारणात्मक विश्लेषण

प्रस्तुत शोधपत्र में राजनीतिक समाजीकरण का अवधारणात्मक विश्लेषण किया गया है। वर्तमान भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में भी राजनीतिक समाजीकरण का यह रुप अधिक प्रचलित है। छिन्न-भिन्न राजनीतिक व्यवस्था को पुनः पटरी पर लाने के लिए राजनीतिक समाजीकरण का प्रकट प्रकार अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। यह राजनीतिक मूल्यों की स्थापना को प्रभावित करने के सरकार द्वारा जान-बूझकर किए जाने वाले प्रयासों से सम्बंधित होते हैं। इस प्रकार के प्रयास साम्यवादी व तानाशाही देशों के अलावा लोकतंत्रीय व्यवस्था वाले समाजों में भी पाया जाता है। किसी भी पाठ्यक्रम (नागरिक राजनीतिक शास्त्र) में विद्यार्थियों के लिए राजनीतिक मूल्यों को अध्ययन विषय से जोड़ना सरकार का प्रकट राजनीतिक समाजीकरण का रुप ही कहा जाएगा। राजनीतिक समाजीकरण के अप्रकट प्रकार में राजनीतियों को स्थायित्व प्रदान करने वाले लक्ष्यों का विकास होता है। इसमें छलयोजन नहीं होने के कारण वह राजनीतिक संस्कृति का अभिन्न अंग बना रहता है।

सविता यादव

समाजीकरण :

जन्म से ही प्रांरभ होकर जीवन पर्यंत चलने वाली एक सतत् सामाजिक प्रक्रिया जो व्यक्ति को समाज का सदस्य बनाती है। बाल्यकाल में इसका प्रभाव सबसे गहरा होता है। समाज विशेष के विश्वासों, धारणाओं, प्रथाओं और मान्यताओं को व्यक्ति द्वारा ग्रहण करवाना इस प्रक्रिया का मुख्य उददेश्य है। यह कार्य दो प्रकार से होता है :

(1) बच्चा या व्यक्ति अपने से बड़े अथवा श्रेष्ठ व्यक्ति का अनुकरण करता है, और

(2) बड़े अथवा श्रेष्ठ व्यक्ति दूसरों को समझा बुझाकर सामाजिक मान्यताओं से अवगत कराते हैं।[1]

संस्कृति सीखा गया व्यवहार है। जन्म लेते समय व्यक्ति संसति के नाम पर शून्य होता है, किन्तु समाज में रहते–रहते और समाज के सदस्यों के साथ विभिन्न अन्तः क्रियाओं में भाग लेकर वह समाज के तौर–तरीकों को समझने लगता है, जैवीकीय धरातल से ऊपर उठकर सामाजिक–सांस्कृतिक होने लगता है। अर्थात् उसे मूल्य परम्पराएँ, अभिवृत्तियाँ आदि सिखायी जाती है; जिससे उसका समाजीकरण होता है। वह समाज का एक अंग बन जाता है।

चाइल्ड के अनुसार ''समाजीकरण से तात्पर्य उस प्रक्रिया से है, जिसके आधार पर बच्चे अपने समाज के योग्य और उचित नागरिक बनते हैं।'' सामाजिक मान्यताओं को आत्मसात करके अपने सामाजिक उत्तरदायित्वों को संभालने की चेतना का विकास ही समाजीकरण है। प्रारम्भ में बालक अपना ही हित देखता है। सामाजिक हितों का मूल्य क्रमशः विकसित होता है। सामान्य सामाजिक आदतों का विकास और समाज के एक उत्तरदायी कर्तव्यपरायण सदस्य की भाँति जीवन व्यतीत करने की क्रियाओं को सीखना ही समाजीकरण है। व्यक्ति स्वभावतः पशु की भाँति स्वार्थी, असभ्य और पाश्विक होता है।

जब मनुष्य के इस पाश्विक मूल स्वभाव में परिवर्तन व परिमार्जन होता है, तभी वह मानव बनता है। पाश्विक वृत्ति का मानव वृत्ति में परिवर्तन को ही समाजीकरण कहा जा सकता है।

बालक प्रारम्भ में स्वयं को समाज का अंग नहीं समझता है, परिवार को अपनाकर स्वयं को परिवार का एक सदस्य समझने की चेतना का क्रमशः विकास होता है, जब बालक पूरे समाज को अपनाकर स्वयं को समाज का एक सदस्य समझने लगता है, तभी उसका समाजीककरण पूर्ण होता है। समाजीककरण एक सामाजिक क्रिया है।[2]

अतः हम कह सकते हैं कि समाजीकरण मानव के सीखने की वह प्रक्रिया है, जिसके द्वारा मनुष्य सामाजिक प्राणी बनता है। समाजीकरण एक निरन्तर प्रक्रिया है, जो बालक के जन्म लेने से लेकर जीवन के अन्तिम काल तक विभिन्न स्तरों से होकर गुजरती है। जॉनसन का विचार है कि समाजीकरण की प्रक्रिया प्रत्येक स्तर में तीन उद्देश्यों को लेकर बच्चों को एक सामाजिक प्राणी बनाती है। ये तीन उददेश्य निम्न हैं :

(1) बच्चा सामाजिक भूमिकाओं को ग्रहण करें।

(2) वह अन्य व्यक्तियों के अनुरूप व्यवहार करें।

(3) आत्मा को विकसित करके व्यक्तित्व का निमार्ण करें और इस प्रकार समाजीकरण की प्रक्रिया को पूर्ण करें।

समाजीकरण की प्रक्रिया को जीवशास्त्रीय एवं सामाजिक परिस्थितियाँ इन दोनों की क्रिया, प्रतिक्रिया और पारस्परिक प्रभाव से मनुष्य विभिन्न व्यवहारों को सीखता हैं।

4 चितावद रोड़, साजन नगर, कैलाश दाल मिल के पास, इन्दौर (मध्यप्रदेश)

समाजीकरण के साधन : पैतृक गुण, परिवार, खेल समूह, पड़ोस, नातेदारी समूह, स्कूल, समाज अथवा समुदाय, जाति, अनुपम अनुभव, भाषा, अन्य द्वितीयक समूह और संस्थाएँ आदि।[3]

राजनीतिक समाजीकरण : राजनीतिक, प्रतीकों संस्थाओं और प्रक्रियाओं पर जानकारी के माध्यम से एक राजनीतिक व्यवस्था में सामाजिक और मूल्य प्रणाली विचारधारा प्रणाली का समर्थन Internalizing की एक प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। यह भी राजनीतिक संसति के अधिग्रहण की प्रक्रिया है।

इस प्रक्रिया में व्यक्ति के रूप में अच्छी तरह से सांस्कृतिक प्रसारण के माध्यम से समुदाय स्तर पर काम करता है। यह राजनीतिक प्रणाली के सबसे महत्त्वपूर्ण कार्यों में से एक है। यह भी सामान्य समाजीकरण जो बाद में जीवन में शुरू होता है, का हिस्सा है।

सामान्य मूल्यों एवं मानदडों के राजनीतिक व्यवहार, और राजनीतिक मामलों में बारे में दो महत्त्वपूर्ण घटकों (Inciuication) है या किसी विशेष पार्टी और अपनी विचारधारा और कार्यवाही। (Programmes) भूमिका, मास मीडिया द्वारा निभाई। सीखने में एक व्यक्ति को कुछ लोगों के शामिल होने के लिए जनता को शिक्षित करने और राजनीतिक मामलों के बारे में सूचित निर्णय लेने के लिए उनके विचार समाशोधन में भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है यह चुनाव के दौरान एक बहुत महत्तपपूर्ण भूमिका निभाता है।

यह एक सीखने की प्रक्रिया है, जिसके द्वारा संचरित कर रहे हैं। मानदंडों और एक अच्छी तरह सक चल रहा राजनीतिक व्यवस्था के लिए स्वीकार्य व्यवहार को दर्शाता है। एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी के लिए यह इस समारोह व्यक्तियों और राजनीतिक वस्तुओं की और उनके झुकाव में शामिल है, का गठन किया है।

सोशल रिसर्च के अनुसार, राजनीतिक समाजीकरण विधि जिसके द्वारा हम राजनीतिक मानदंडो और मूल्यों के अधिग्रहण हैं और हम हमारे जीवन के दौरान राजनैतिक समाजीकरण अनुभव है। उदाहरण के लिए हमारे राजनीतिक विचारों को आमतौर पर हमारे माता–पिता से प्रभावित है, यह किसी विशेष पार्टी के साथ की पहचान या एक विरोध पार्टी के एक नकारात्मक दृष्टिकोण होने के रूप ले सकता हैं। जैसा कि हम घर छोड़ अपने राजनीतिक विचारों के आगे सहकर्मी समुहों द्वारा प्रभावित हो जाएगा, कार्यस्थल में विशेष रूप से हम क्षेत्र में रहते भी मतदान व्यवहार का निर्धारण करने में एक कारक हो सकता हैं। लेकिन शायद मीडिया राजनीतिक समाजीकरण के सबसे महत्वपूर्ण एजेंट है।

व्यवहार पर जिन विभिन्न सामाजिक क्रियाओं व प्रतिक्रियों का प्रभाव पड़ता है, उससे व्यक्ति का राजनीतिकरण होता है। जिस प्रकार समाजीकरण का सम्बन्ध मूल्यों, परम्पराओं, अभिवृतियों से होता है; उसी प्रकार जब राजनीतिक मूल्यों, विश्वासों, अभिवृतियों और परम्पराओं को औपचारिक या अनौपचारिक तौर पर सिखाया जाता है, तो उसे राजनीतिक समाजीकरण कहा जाता हैं।[4]

राजनीतिक ढंग से सन्तुलित और सफल बनने के लिए तथा राजनीतिक क्रियाकलाओं में भाग लेने के लिए व्यक्ति को समाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा दीक्षित किया जाता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि एक प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से राज संस्कृति का अभिरक्षण तथा उसमें परिवर्तन होता है।

प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में राजनीतिक संस्कृति का विशेष महत्व होता है। यह राजनैतिक संस्कृति भिन्न–भिन्न राजनीतिक समाजों में भिन्न भिन्न प्रकार की होती है। राजनीतिक संस्कृति का विकास भी अलग–अलग ढंग का होता है। अतः प्रत्येक देश की राजनीतिक संस्कृति विशिष्ट होती है। संस्कृति को विशिष्टता प्रदान करने में अनेक तत्व या कारणों का योगदान होता है। जिसमें सर्वाधिक प्रभावक तत्व या कारण राजनीतिक समाजीकरण है। राजनीतिक संसति की रक्षा राजनीतिक समाजीकरण के द्वारा ही सम्भव है, प्रत्येक देश की राजनीतिक संस्कृति को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित करने का महत्त्वपूर्ण कार्य राजनीतिक समाजीकरण के माध्यम से होता है। जब व्यक्ति की सीखने की प्रक्रिया का सन्दर्भ समाजिक व्यवस्था से जोड़ते हैं, तो इस प्रक्रिया को समाजीकरण कहा जाता है। जब इसका सन्दर्भ राजनीतिक व्यवस्था से जोड़ दिया जाता है तब इसे राजनैतिक समाजीकरण कहा जाता है। राजनीतिक व्यवस्था एवं राजनीतिक संसति दोनों सुदृढ़ होते हैं।

यह प्रक्रिया लम्बी है तथा बचपन से आरम्भ होकर जीवन पर्यन्त चलती है द्वितीयक समूहों के माध्यम से परिवर्तित व परिमार्जित भी होती रहती है। राजनीतिक अनुभव, नेताओं से सम्बन्ध, मतदान में सहभागिता, कानूनों का पालन, चुनाव के समय आश्वासन, निर्वाचनीय सम्बन्ध आदि राजनीतिक सामाजीकरण के अभिकरण है। राजनीतिक घटनाएँ और राजनीतिक दुनिया में अनुभव महत्त्वपूर्ण कारक हैं, जो व्यक्ति को राजनीतिक क्रिया कलापों में भाग लेने को प्रेरित करते हैं। बदली राजनीतिक परिस्थितियों में स्वंय के अनुभव के आधार पर राजनीतिक मूल्यों में समायोजन परिवर्तन के लिए सहयोगी होते हैं।

''प्रक्रिया जिसके द्वारा जनता का अभिमुखीकरण उद्देश्यों की दिशा में होता है।'' व्यक्ति का राजनीतिक समाजीकरण इस हेतु करवाया जाता है कि वह व्यवस्था से अभिमुखीकरण हो सके ताकि वह अपने उद्देश्यों की प्राप्ति कर सके और उस व्यवस्था का हिस्सा बनकर उसमें भाग ले। मानव के सीखने की वह प्रक्रिया जिसके द्वारा व्यक्ति सामाजिक प्राणी के साथ एक राजनीतिक प्राणी बनता है, ऐसी प्रक्रिया है, जो राजनीतिक संसति एवं राजनीतिक व्यवस्था में राजनीतिक व्यक्तियों में सदैव एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होती रहती है।

राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया 1950 के बाद विकसित हुई। जिस समाज में राजनीतिक चेतना का, राजनीतिक जीवन में भाग लेने की भावना का विकास जितना अधिक होता है, वह समाज राजनीतिक समाजीकरण के दौर से अधिक गुजरता है।

बीसवीं शताब्दी में राजनीतिक समाजीकरण से सम्बन्धित अध्ययनों को तीन प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है :

(1) प्रथमकाल : 1935 से पूर्व जिसमें समाज वैज्ञानिकों द्वारा नागरिक प्रशिक्षण के औपचारिक पहलुओं का ही विश्लेषण किया गया है।

(2) द्वितीयकाल : 1935–1955 जिसमें व्यक्तित्व एवं राजनीतिक तथा राष्ट्रीय चरित्र के अध्ययनों में विशेष रूचि ली गई तथा समाजान्तर्गत एवं विभिन्न समाजों में राजनीतिक दृष्टि से व्यक्तित्व में असमानता एवं इनके उद्भव का विशेष रूप से अध्ययन किया गया।

(3) तृतीयकाल : 1955 के पश्चात् जिसमें राजनीतिक व्यवहार के विकास के बारे में अध्ययनों पर अधिक ध्यान दिया गया, तृतीय प्रक्रम में ही ''नागरिकता'' या ''नागरिक प्रशिक्षण'' शब्द के स्थान पर राजनीतिक समाजीकरण शब्द का प्रयोग किया जाने लगा है, जिसका सर्वाधिक श्रेय हीमैन को दिया जाता है।

राजनीतिक समाजीकरण सीखने की एक प्रक्रिया है। राजनीतिक समाजीकरण राजनीति एवं राजनीतिक व्यवहार के क्षेत्र में समाजीकरण की प्रक्रिया का परिसीमन है। सीख की वह प्रक्रिया है, जिसके द्वारा व्यक्ति राजनीतिक व्यवस्था के आदर्शों एवं मूल्यों का अन्तःकरण करता है। थोड़े से भिन्न शब्दों में यह वह प्रक्रिया है, जिसके द्वारा राजनीतिक मूल्य एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तांतरित होते हैं।

वर्तमान भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में भी राजनीतिक समाजीकरण का यह रूप अधिक प्रचलित है। छिन्न–भिन्न राजनीतिक व्यवस्था को पुनः पटरी पर लाने के लिए राजनीतिक सामाजीकरण का प्रकट प्रकार अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होता है। यह राजनीतिक मूल्यों की स्थापना को प्रभावित करने के सरकार द्वारा जनबूझकर किए जाने वाले प्रयासों से सम्बन्धित होते हैं। इस प्रकार के प्रयास साम्यवादी व तानाशाही देशों के अलावा लोकतन्त्रीय व्यवस्था वाले समाजों में भी पाया जाता है। किसी भी पाठ्यक्रम (नागरिक राजनीतिक शास्त्र) में विद्यार्थियों के लिए राजनीतिक मूल्यों को अध्ययन विषय से जोड़ना सरकार का प्रकट राजनीतिक सामाजीकरण का रूप ही कहा जायेगा। राजनीतिक सामाजीकरण के अप्रकट प्रकार में राजनीतियों को स्थायित्व प्रदान करने वाले लक्ष्यों का विकास होता है। इसमें छलयोजन नहीं होने के कारण वह राजनीतिक संस्कृति का अभिन्न अंग बना रहता है। ऐसे समाजीकरण में राष्ट्र के प्रति निम्न और विशिष्ट मूल्यों को पनपाया नहीं जाता, वरन् यह स्वंय ही पनप जाते हैं। इस प्रकार का सामाजीकरण व्यक्ति में सहज रूप में पाए जाते हैं, जो अधिक स्थायी भी होते हैं।[5]

सन्दर्भ :

(1) समाजशास्त्र पारिभाषिक कोष वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, मानव संसाधन विकास मन्त्रालय, भारत सरकार 1987, पृ. 127.

(2) *डॉ. बघेल डी. एस. एवं डॉ. कचुलीसिंह टी.पी. (2010) : राजनैतिक समाजशास्त्र, विवेक प्रकाशन, पृ. 34.*

(3) *डॉ.बघेल डी. एस. एवं डॉ. कचुलीसिंह टी.पी. (2010) : राजनैतिक समाजशास्त्र, विवेक प्रकाशन, पृ. 59.*

(4) *डॉ.बघेल डी. एस. एवं डॉ. कचुलीसिंह टी.पी. (2010) : राजनैतिक समाजशास्त्र, विवेक प्रकाशन, पृ. 67.*

(5) *प्रो. गुप्ता एम.एल. एवं शर्मा, डी.डी. (2002) : समाजशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, पृ. 202.*

❁❁

UGC Approved Journal
- Research Link

Since March 2002

An International, Registered & Referred Monthly Journal : Sociology
Research Link - 160, Vol - XVI (5), July - 2017, Page No. 55-57
ISSN - 0973-1628 ■ RNI - MPHIN-2002-7041 ■ Impact Factor - 2015 - 2.782

सतनामी जाति की महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थिति - समाजशास्त्रीय विश्लेषण (बलौदाबाजार जिले के बिलाईगढ़ विकासखण्ड के विशेष संदर्भ में)

प्रस्तुत शोधपत्र में सतनामी जाति की महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थिति का समाजशास्त्रीय विश्लेषण, बलौदाबाजार जिले के बिलाईगढ़ विकासखण्ड के विशेष संदर्भ में किया गया है। भारतीय समाज में महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थिति का अवलोकन करन से ज्ञात होता है कि प्राचीनयुग में इनकी स्थिति पुरुषों के बराबर थी। मध्यकाल में महिलाओं की स्थिति काफी दयनीय हो गई, क्योंकि इस काल में मुसलमान शासकों का शासन था। मुस्लिम शासक महिलाओं को पर्दे में रखना पसंद करते थे, इन्हीं वजहों महिलाएँ शिक्षा-दीक्षा व अन्य कार्यों से वंचित रहीं। सतनामी जाति की महिलाओं की स्थिति भी दयनीय थी और है। आधुनिक युग में भी सतनामी महिलाओं की स्थिति दयनीय है, परंतु शिक्षा के प्रचार-प्रसार एवं सूचना-संचार तकनीकी क्रांति से इनके जीवन स्तर में परिवर्तन आया है।

कुँजी शब्द : सतनामी महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थिति।

सुनीता जांगडे* एवं डॉ.(श्रीमती) हेमलता बोरकर वासनिक**

प्रस्तावना :

प्रत्येक व्यक्ति का समाज में उसकी अपनी सामाजिक स्थिति होती है। व्यक्ति का सामाजिक स्थिति जितनी उच्च होती है, उस व्यक्ति को समाज में उतनी ही सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त होती है। भारतीय समाज में व्यक्ति सामाजिक स्थिति का मूल्यांकन उसके आर्थिक स्थिति के आधार पर लगाया जाता है, जो व्यक्ति आर्थिक रूप से जितना संपन्न होगा वह समाज में उतने ही उच्च शिखर पर रहेगा। कानून की दृष्टि से भारतीय नारी को पुरूष के भांति जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में समान अवसर प्राप्त हुए है। परन्तु आज भी परिवार और समाज में नारी की स्थिति में ज्यादा सुधार नही हुआ है। आकड़ों से पता चलता है कि विश्व की कुल जनसंख्या का आधा भाग होते हुए भी महिलाएँ कुल कार्य घंटों का दो तिहाई भाग स्वयं करती है। बदले में उन्हें आय का मात्र 10वां हिस्सा भुगतान के रूप में दिया जाता है।[1] इसके साथ ही स्त्रियों के गृहस्थी के कार्यो को कोई उत्पादक कार्य नहीं माना जाता है। स्वतंत्रता के पश्चात से समाज में स्त्री की स्थिति में सुधार हुआ है। किन्तु यह परिवर्तन पूर्ण है, आज भी हमारे समाज में अनेक कुप्रथाएँ, अंध–विश्वास हैं, जिन्हें समाप्त किए बिना स्त्री को न्याय नहीं मिलेगा। बढ़ती हुई शिक्षा के कारण स्त्री आर्थिक रूप से निर्भर होने लगी है।[2] व्यवसाय एवं जीविका का साधन नहीं, अपितु यह निर्धारित व्यवसायिक कार्यो को सम्पन्न करने के पश्चात् व्यक्ति के जीवन के अन्य क्षेत्रों को प्रभावित और निर्धारित करता है। सामाजिक स्थिति और आर्थिक दशाओं में महिलाओं की जीवन शैली का निर्धारण उसके कार्य अनुसार होता है।

अध्ययन का उद्देश्य :

(1) सतनामी जाति की महिलाओं की सामाजिक स्थिति को ज्ञात करना।

(2) सतनामी जाति की महिलाओं की आर्थिक स्थिति को ज्ञात करना।

(अ) अध्ययन पद्धति :

प्रस्तावित अध्ययन क्षेत्र में बलौदाबाजार जिले के अन्तर्गत बिलाईगढ़ विकासखण्ड का चुनाव किया गया है, जिसमें ग्राम कोसमकुण्डा, बलौदी, पण्ड्रीपाली, इन तीनों ग्रामों का अध्ययन हेतु चुनाव किया गया है।

(ब) उत्तरदाताओं का चुनाव :

अध्ययन हेतु कुल 675 उत्तरदाताओं में से 120 उत्तरदताओं का चयन अध्ययन हेतु दैव निर्देशन के लाटरी प्रणाली द्वारा किया गया है।

(स) तथ्यों का संकलन हेतु प्रयुक्त उपकरण एवं प्रविधि :

प्रस्तावित अध्ययन के लिए तथ्यों का संकलन हेतु साक्षात्कार अनुसुची उपकरण एवं अवलोकन प्रविधि का प्रयोग किया इसके अलावा अध्ययन विषय से संबंधित तथ्यों के गहन अध्ययन हेतु अनौपचारिक वार्तालाप को भी प्रयोग किया गया है।

(द) प्राप्त तथ्यों का वर्गीकरण, सारणीयन, विश्लेषण एवं प्रस्तुतिकरण :

अध्ययन से प्राप्त तथ्यों का वर्गीकरण सारणीयन, विश्लेषण, एवं प्रस्तुतिकरण, किया गया है।

**शोधार्थी, समाजशास्त्र अध्ययनशाला, पं.रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)*
***वरिष्ठ प्राध्यापक, समाजशास्त्र अध्ययनशाला, पं.रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)*

उत्तरदाताओ की सामाजिक स्थिति :

किसी भी व्यक्ति की सामाजिक स्थिति का मूल्यांकन निम्न आधार पर आंका जाता है :

(1) पड़ोसी से संबंध : वर्तमान नगरीय सामाजिक परिवेश में पड़ोसियों का अध्ययन अत्यंत जरूरी है, क्योंकि पड़ोसी ही वह पहला रिश्तेदार है, जो व्यक्ति के सुख–दुख में सबसे पहला सहभागी होता है। एक पड़ोसी का दूसरे पड़ोसी के साथ कैसा सम्बंध है, यह निर्भर करता है एक–दूसरे के व्यवहार एवं संबंधों पर। आज के समय में ज्यादातर लोग यही कहते हैं कि जब भी जरूरत होती है, तो रिश्तेदारों से ज्यादा पड़ोसी काम आते हैं, क्योंकि जरूरत के समय में वो ही आपके काम आते हैं, परंतु इसके लिए जरूरी होता है कि आपके पड़ोसी अच्छे हों।[3]

अध्ययनगत समूह में पड़ोसी से सम्बध को ज्ञात करने का प्रसाय किया गया है।

(2) कठिनाइयों में पड़ोसी द्वारा मदद : किसी भी व्यक्ति के जीवन में परिवार, पड़ोसियों एवं मित्रों की बहुत अहमियत होती है। इसके बिना व्यक्ति का जीना दूभर हो जाता है। ये सभी कारक व्यक्ति को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से भावनात्मक सहायता प्रदान करते हैं। पड़ोस के लोग एक–दूसरे के सहायक होते हैं। खुशी का अवसर हो, चाहे दुःख का, पड़ोसी जितने काम आते हैं, उतने दूर रहने वाले सगे–संबधी नहीं। हमें पड़ोसियों के साथ मधुर व्यवहार करना चाहिए तथा आवश्यकता पड़ने पर पड़ोसियों को एक–दूसरे की मदद करनी चाहिए।[4]

उत्तरदाताओं द्वारा यह जानने का प्रयत्न किया गया है कि पड़ोसी द्वारा परेशानी या कठिनाइयों में मदद करते हैं या नहीं।

(3) सामाजिक बैठकों में हिस्सा लेना : सामान्यतः ग्रामीण महिलाएँ समाज में होने वाली सामाजिक बैठकों में पुरूषों के साथ अपनी सहभागिता दर्ज कराती हैं तथा सामाजिक निर्णय मे अपने विचारों को खुलकर भी रखती हैं। इन विचारों के आधार पर ही समाज का मुखिया किसी विशेष निर्णय पर पहुँच पाता है। वह समाज के सम्मुख अपने विचारों को रख पाता है। प्रस्तुत अध्ययन में अध्ययन क्षेत्र की महिलाएँ सामाजिक बैठकों में हिस्सा लेने जाती हैं।

(4) सामाजिक कार्यक्रमों में सहभागिता : मानव एक सामाजिक–सांस्कृतिक प्राणी है। वह जन्म से मृत्यु पर्यन्त तक समाज में ही रहता है। अपने समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति समाज में ही रहकर पूरा कर सकता है। समाज समारोह के माध्यम से ही लोगों को एक–दूसरे से जोड़ता है। सामाजिक कार्यक्रमों में भाग लेना किसी भी महिला की मिलनसार प्रवृत्ति एवं उसकी सामाजिक स्वतत्रंता का प्रतीक है। भारत में महिलाओं की स्थिति सदैव एक समान नहीं रही है। इसमें युगानुरूप परिवर्तन होते रहते हैं। उनकी स्थिति में वैदिक युग से लेकर आधुनिक काल तक का अनेक उतार–चढ़ाव आते रहे हैं तथा उनके अधिकारों में तदनरूप बदलाव भी होते रहे हैं। वैदिक युग में उनकी स्थिति सुदृढ़ थी परिवार तथा समाज में उन्हें सम्मान प्राप्त था सम्पत्ति में उनकों बराबरी का हक था। सभा व समितियों में स्वतंत्रापूर्वक भाग लेती थी।[5]

तालिका 1 से स्पष्ट होता है कि अध्ययनगत समूह की 96.6 प्रतिशत उत्तरदाताओं का पड़ोसियों से अच्छा संबंध है तथा केवल

तालिका क्रमांक 1 : उत्तरदाताओं की सामाजिक स्थिति

क्र.	पड़ोसी से संबंध	आवृत्ति N=120	प्रतिशत
1	मधुर	116	96.6
2	तनावपूर्ण	4	3.4
	योग	**120**	**100**

क्र.	पड़ोसी द्वारा मदद	आवृत्ति N=120	प्रतिशत
1	हाँ	110	91.6
2	नहीं	10	8.4
	योग	**120**	**100**

क्र.	सामाजिक बैठकों में हिस्सा लेना	आवृत्ति N=120	प्रतिशत
1	हाँ	15	12.5
2	नहीं	105	87.5
	योग	**120**	**100**

क्र.	सामाजिक बैठकों में हिस्सा लेने का स्वरूप	आवृत्ति N=15	प्रतिशत
1	अध्यक्ष	4	26.6
2	आम नागरिक	11	73.4
	योग	**15**	**100**

3.4 प्रतिशत उत्तरदाताओं का पड़ोसियों से सम्बंध खराब है।

अतः जिन उत्तरदाताओं का अपने पड़ोसी से जमीन–जायजाद के लिए झगड़ा हुआ है, उन लोगों से उत्तरदाता का सम्बंध खराब है। अत : कहा जा सकता सकता है कि उत्तरदाताओं की सामाजिक स्थिति अच्छी है।

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट होता है की अध्ययगत समूह के 91. 6 प्रतिशत उत्तरदाताओं की पड़ोसी कठिनाइयों में मदद करते हैं तथा 8.4 प्रतिशत उत्तरदाताओं के पड़ोसी कठिनाइयों में मदद नहीं करते हैं। अतः जिन उत्तरदाता का अपने पड़ोसी से किसी बात को लेकर विवाद हुआ है, उनके पड़ोसी कठिनाइयों में मदद नही करते हैं।

सामाजिक बैठकों में हिस्सा लेने संबधित तालिका से स्पष्ट होता है कि अधिकतर प्रतिशत उत्तरदाता सामाजिक बैठकों में हिस्सा नहीं लेती तथा 12.5 प्रतिशत उत्तरदाता सामाजिक बैठकों में हिस्सा लेती है। अतः स्पष्ट है कि अध्ययनगत समूह की सतनामी जाति की महिलाएँ सामाजिक बैठकों में हिस्सा नहीं लेती हैं।

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि अध्ययनगत समूह की 73.4 प्रतिशत उततरदाता समाज में होने वाली बैठकों में आम नागरिक के रूप में हिस्सा लेती हैं तथा 26.6 प्रतिशत उत्तरदाता समाज में होने वाली बैठकों में अध्यक्ष के रूप में हिस्सा लेती हैं। अतः स्पष्ट है कि महिलाएँ अभी भी घर की चारदिवारी में ज्यादा समय व्यतीत करती हैं।

उत्तरदाताओं की आर्थिक स्थिति :

किसी भी व्यक्ति की आर्थिक स्थिति का मूल्याकंन निम्न आधारों पर किया जा सकता है :

(1) स्वयं का मकान : स्वामित्व के अधार पर मकान दो प्रकार के हो सकते हैं, स्वयं का मकान व किराये का मकान। आवास मनुष्य की एक मौलिक आवश्यकता है। इसका प्रभाव जीवन के सभी पहलू स्वास्थ्य, शांति और कुशलता पर पड़ता है। आखिर घर केवल

चार दिवारों और सिर पर छत का ही नाम नहीं है।[6] अध्ययनगत समुह के सभी उत्तरदाताओं के पास स्वयं का मकान है।

(2) मकान का स्वरूप : गाँवों में अवासीय क्षेत्रों में वितरण, घनत्व आदि के स्थानात्मक भिन्नता नहीं होती है। प्रत्येक मनुष्य अपनी आय एवं आवश्यकता के अनुसार निवास चाहता है। अध्ययन क्षेत्र से प्राप्त तथ्यों के आधार पर जिन उत्तरदाताओं का स्वयं का मकान है, उसके मकान का स्वरूप के बारे में जानकारी प्राप्त की गई है।

(3) कृषि योग्य भूमि : कृषि भारत की जीवन रेखा है। यहाँ पर ग्रामीण क्षेत्रों में 65 से 70 प्रतिशत जनसंख्या जीवनयापन के लिए कृषि पर निर्भर रहती है। यहाँ ग्रामीण क्षेत्रों में आदिकालीन व्यवसाय है। कृषि ही एक मात्र ऐसा व्यवसाय है, जो स्थायित्व देता है। यह ग्रामीण अर्थव्यवस्था का मुख्य साधन है। ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि के द्वारा ही जीवन की महत्वपूर्ण आवश्यकताओं की पूर्ति होती है।[7] यदि कृषकों के पास कृषि योग्य भूमि है, तो आर्थिक सामाजिक एवं प्रतिष्ठा की दृष्टि से भी महत्व होता है।

(4) आय का स्त्रोत : आर्थिक आत्म निर्भरता महिला स्वतंत्र सामानता एवं न्याय की स्थापना की पूर्व शर्त है। महिला द्वारा अपनी स्वतत्रता एवं विकास हेतु स्थापित मूल्यों एवं परंपराओं का विरोध करना स्वभाविक है। सकरात्मक विरोध की क्षमता उसी स्थिति में प्रभावी बन सकता है। जब समाज एवं परिवार के सहयोग अथवा असहयोग की स्थिति मे भी वह अपनी अस्मिता एवं स्वायत्ता का रक्षण कर सकें कार्यशील विकल्प का निर्धारण भी स्वावलंबन की दिशा में एक अनिवार्य निर्णय है।[8]

तालिका क्रमांक 2 : उत्तरदाताओं की आर्थिक स्थिति

क्र.	उत्तरदाताओं के स्वयं के मकान	आवृत्ति N=120	प्रतिशत
1	हाँ	120	100.0
2	नहीं	0	0.00
	योग	**120**	**100**

क्र.	उत्तरदाताओं के मकान का स्वरूप	आवृत्ति N=120	प्रतिशत
1	कच्चा	75	62.5
2	पक्का	15	12.5
3	अर्द्ध–पक्का	30	2.5
	योग	**120**	**100**

क्र.	कृषि योग्य भूमि	आवृत्ति N=120	प्रतिशत
1	हाँ	110	91.6
2	नहीं	10	8.4
	योग	**120**	**100**

क्र.	उत्तरदाताओं के आय के स्त्रोत	आवृत्ति N=120	प्रतिशत
1	कृषि	60	50
2	नौकरी	20	16.6
	व्यवसाय	10	8.3
3	मजदूरी	30	25.1
	योग	**120**	**100**

प्रस्तुत तालिका 2 में उत्तरदाताओं से मकान के स्वरूप सम्बंधी जानकारी प्राप्त की गई है।

अध्ययनगत समूह की सभी उत्तरदाताओं के पास स्वयं का मकान है।

उत्तरदाताओं के मकान के स्वरूप का विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि अध्ययनगत समूह के पास अधिकांश (62.5 प्रतिशत) घर कच्चे हैं, 25 प्रतिशत उत्तरदाता के घर अर्धपक्के तथा 12.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं के घर पक्के हैं।

अतः कहा जा सकता है कि आर्थिक स्थिति ठीक न होने के कारण अधिकांश महिलाएँ कच्चे एवं अर्धपक्के मकान में निवास करती हैं।

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट हेाता है कि अध्ययनगत समूह के अधिकतर उत्तरदाताओं के पास स्वयं की कृषि योग्य भूमि है तथा इनमें से केवल 8.4 प्रतिशत उत्रदाता भूमिहीन हैं। अतः स्पष्ट है कि अधिकतर लोगों के पास कृषि भूमि है।

आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि अध्ययनगत समूह की 50 प्रतिशत परिवार में आय का मुख्य स्त्रोत कृषि है। 50 प्रतिशत परिवार मजदूरी, 25.1 नौकरी, तथा शेष व्यवसाय पर आश्रित हैं। अधिकतर परिवार की आय का मुख्य स्त्रोत व्यवसाय है। अतः स्पष्ट है कि अध्ययनगत समूह परिवार कृषि पर निर्भर है।

संदर्भ :

(1) कपूर, प्रमिला (1974) : भारतीय समाज में कार्यशील महिलाएँ, विकास पब्लिसिंग हाऊस, नई दिल्ली, पृ. 22.

***(2)** कपूर, प्रमिला (1974) : भारतीय समाज मे कार्यशील महिलाएँ, विकास पब्लिसिंग हाऊस, नई दिल्ली, पृ. 23.*

***(3)** https://www. Whatinidia.com/Achchha padosi*

***(4)** https:// www.essaysinhindi.com/essay/%Eo/%A4*

***(5)** http: www . rachnakar .org /2015/08/bdog-post html*

***(6)** https:// hi vikaspedia.in social-welfare*

***(7)** करालें, गंगाधर (2008) : ग्रामीण विकास के लिए समन्वित प्रयास, कानसेप्ट पब्लिशिंग कंपनी, दिल्ली, पृ. 82.*

***(8)** जैन, मंजू : कार्यशील महिलाएँ एवं सामाजिक परिवर्तन, प्रिटंवेल पब्लिशर्स, जयपुर, पृ. 40.*

❁❁

UGC Approved Journal
- Research Link

Since March 2002

An International, Registered & Referred Monthly Journal : Sociology
Research Link - 160, Vol - XVI (5), July - 2017, Page No. 58-60
ISSN - 0973-1628 ■ RNI - MPHIN-2002-7041 ■ Impact Factor - 2015 - 2.782

छतरपुर जिले की विभिन्न प्राथमिक शालाओं की समस्याएँ एवं शैक्षणिक स्तर के प्रभाव का अध्ययन

प्रस्तुत शोधपत्र में छतरपुर जिले की विभिन्न प्राथमिक शालाओं की समस्याओं एवं शैक्षणिक स्तर के प्रभाव का अध्ययन किया गया है। शिक्षा ही विकास की आधारशिला है, विज्ञान में तकनीकियों के सृजन से दिन-प्रतिदिन अत्यधिक उन्नति हो रही है, जिसमें अन्य देशों के साथ भारत भी अपनी भूमिका निभा रहा है, परंतु इसके पश्चात् भी भारत देश शैक्षणिक दृष्टि से अपरिपक्व है। अध्ययन हेतु छतरपुर जिले के विभिन्न शासकीय व अशासकीय अनुदान प्राप्त विद्यालयों से 10 विद्यालयों के 300 विद्यार्थियों का चयन किया गया है, जिनमें 200 छात्र एवं 100 छात्राएँ सम्मिलित हैं। शोधार्थी द्वारा निदर्शन विधि का उपयोग किया गया है। शोध कार्य के लिए शोधार्थी द्वारा विद्यार्थियों, शिक्षकों एवं अभिभावकों से प्राप्त जानकारी के अनुसार विभिन्न शैक्षणिक व शालाओं की समस्याओं सम्बंधी आंकड़ें छतरपुर जिले की विभिन्न प्राथमिक शालाओं से प्राप्त किए गए हैं। अध्ययन से स्पष्ट हुआ कि ग्रामीण व शहरी शालाओं में प्राथमिक शिक्षण स्तर गिरता जा रहा है। इन सभी शाला सम्बंधित समस्याओं के प्रभाव से विद्यार्थियों के शैक्षणिक स्तर पर बुरा प्रभाव हो रहा है।

अभिलाषा तिवारी*, डॉ.अनीता धुर्वे एवं वीरेंद्र गुप्ता*****

प्रस्तावना :

शिक्षा ही विकास की आधार शिला है। शिक्षा के द्वारा ही मानव ने अपनी मानसिक, आध्यात्मिक और सामाजिक प्रगति की है। शिक्षा एक गतिशील सामाजिक प्रक्रिया है, समाज में परिवर्तन के अनुरूप ही शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सकती है। शिक्षा का उद्देश्य रोजगार पाना बिल्कुल नहीं है, अपितु ज्ञान रुपी प्रकाश को प्राप्त कर अज्ञान रुपी अँधेरी रात्रि के अंधकार को दूर करना है। बच्चे के शाला में दाखिल होने के पूर्व सुनियोजित योजना बनाकर शिक्षा दी जाने वाली संस्थाओं को उसके सर्वांगीण विकास हेतु पूर्णतः सुसज्जित होना चाहिए। शिक्षा में संस्कृति तत्व का भी विशेष महत्व रहता है। आधुनिक काल में शिक्षा पर पाश्चात्य सभ्यता का व्यापक प्रभाव पड़ा एवं अंग्रेजी शिक्षा को आत्मसात करने का प्रत्यन आरम्भ हुआ है।

अरस्तु ने ठीक ही कहा है की "मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, शिक्षा के आभाव में मानव जीवन की कल्पना करना असंभव है, सृष्टि से लेकर अब तक शिक्षा का प्रभाव एवं अस्तित्व भली प्रकार स्वीकार किया जा रहा है। जब तक संसार में मानव का अस्तित्व बना रहेगा, तब तक शिक्षा की प्रक्रिया निरंतर चलती रहेगी। शिक्षा में समाज के सभी सदस्यों का सहयोग होता है। शिक्षा और जीवन एक दूसरे से पृथक न होने वाली दो प्रक्रियाएँ हैं, यद्यपि शिक्षा स्वयं सामाजिक, आर्थिक प्रगति आरम्भ नहीं करती, किन्तु शिक्षा की कमी विकास प्रक्रिया में बाधा अवश्य उत्पन्न कर सकती है।

प्राथमिक शिक्षा : भारत में प्राथमिक शिक्षा का इतिहास बहुत पुराना है, प्राचीन काल से ही अनेक लोग उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बजाय दैनिक जीवन के लिए आवश्यक शिक्षा प्राप्त करने के बाद किसी व्यवस्था में प्रविष्ट हो जाते हैं, इससे ही लोगों की आवश्यकता की पूर्ति के लिए मंदिरों में पाठशालाओं की और मस्जिदों में मकतबों तथा मदरसों तथा गुरुद्वारों आदि धार्मिक स्थानों पर पाठशालाएँ खोली गई है। आधुनिक युग में भी आर्य समाज में पाठशालाएँ खोली गई हैं।

प्राथमिक शिक्षा आधुनिक युग का मौलिक अधिकार है एवं साक्षरता की एक अनिवार्य मांग होने के कारण एक युग धर्म बन गया है, क्योंकि प्राथमिक शिक्षा के विकास के बिना आज कोई राज्य न तो अपने देशवासियों को जीवन के प्रचुर साधन प्रदान कर सकता है, और न ही अंतर्राष्ट्रीय मंच पर अपनी भूमिका का भली प्रकार से निर्वाह कर सकता है। वस्तुतः विश्व के सभी राष्ट्र प्राथमिक शिक्षा की अनिवार्यता के आधार पर ही उच्च शिखर पर पहुँच सकते हैं। इसलिए आज प्राथमिक शिक्षा जीवन की आर्थिक समानता एवं विकास का पर्याय बन गई है।

प्राथमिक शिक्षा के अंतर्गत सैद्धान्तिक विषयों की शिक्षा के साथ–साथ बच्चों का चारित्रिक, मानसिक, बौद्धिक विकास भी होता है तथा बच्चे को प्राकृतिक, मानसिक,पारिवारिक, जीवन का सामंजस्य समझ में आता है। प्राथमिक शिक्षा के आधार पर ही बच्चे का सम्पूर्ण विकास होता है, जैसे अज्ञानता, अन्धविश्वास, कुरुतियाँ, अंधश्रध्दा आदि का उसे ज्ञान होता है।

**पी-एच.डी.शोधार्थी (समाजशास्त्र विभाग), बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (मध्यप्रदेश)*
***प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (मध्यप्रदेश)*
****पी-एच.डी.शोधार्थी, पादप रोग विज्ञान विभाग, राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय, ग्वालियर (मध्यप्रदेश)*

प्राथमिक शाला के अंतर्गत विद्यार्थियों के शाला त्यागने के प्रमुख कारणों में से जैसे गरीबी, अभिभावकों द्वारा गृह कार्य न करवाना, व्यवसाय या पशुपालन में सहयोग, मजदूरी करने के लिए पलायन कर जाना, शिक्षकों द्वारा कक्षा में रूचि पूर्ण व प्रभावी शिक्षण न करना, शिक्षकों द्वारा छात्रों को दंड, विद्यालयों में खेलकूंद व पाठ्य सामग्री न होना, अभिभावकों द्वारा उचित अध्ययन सामग्री न देना, बालिका के प्रति नकारात्मक द्रष्टिकोण इत्यादि।

जब किसी देश के नागरिक शिक्षा से अनुशासित होंगे, तभी वे अपने राष्ट्र और पारिवारिक वातावरण की उन्नति में सहायक सिद्ध होंगे।

अध्ययन क्षेत्र :

छतरपुर जिला म.प्र. राज्य के मध्य उत्तरी भाग में बसा हुआ है। यह जिला $24^0$20' तथा $25^0$15' उत्तरी अक्षांश और $79^0$25' तथा $80^0$10' पूर्वी देशांतर के बीच स्थित है। इस जिले की पूर्व से पश्चिम तक लम्बाई 143.08 एवं उत्तर से दक्षिण तक 138.24 कि.मी. है। छतरपुर जिले का क्षेत्रफल 8687 वर्ग कि.मी. है,छतरपुर जिले की जनसंख्या 2011 की जनगणना के अनुसार 1474723 है, जिसमें 788933 पुरुष एवं 685790 महिलाएँ निवास करती हैं। अध्ययन क्षेत्र छतरपुर जिले में 1939 प्राथमिक, 609 माध्यमिक, 78 हाई स्कूल एवं 48 हायर सेकेण्डरी स्कूल है।

अध्ययन विषय का महत्व :

शोधार्थी द्वारा प्रस्तुत शोध अध्ययन की सहायता से ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र में स्थित शालाओं की समस्या से निजात पाने व सम्बंधित योजना बनाने में सहायता प्राप्त होगी, जिससे छात्रों (विद्यार्थियों) के शैक्षणिक स्तर में सुधार व सर्वांगीण विकास करने में सहायता प्राप्त होगी।

पूर्व शोध अध्ययन :

श्रीमती तृषा शर्मा (2013) ने अपने शोध अध्ययन में विद्यालय के बच्चे के संवर्द्धन की उचित व्यवस्था को अनिवार्य बताया है, ताकि बालक के नैतिक मूल्य का स्तर उच्च हो सके। रामकुमार बघेल (2014) ने निष्कर्ष निकाला है कि, ग्रामीण कृषि कार्य में व्यस्त होने के कारण व उनमें शिक्षा के प्रति जागरूकता की कमी होने के कारण सामान्य वर्ग के जाति की अपेक्षा अनुसूचित जनजाति के विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि कम पाई जाती है। गोरी शर्मा (2014), ने बताया की शालाओं में विषय विशेषज्ञ होने व उनका प्रत्येक छात्रों को प्रोत्साहित करने पर ही उनकी शैक्षणिक स्तर में वृद्धि की जा सकती है, कक्षा में बच्चों की सभी विषय में समझ को मजबूत किया जा सकता है। एम.सुधीश. (2004) ने बताया की ग्रामीण, आदिवासी व गैर–आदिवासी क्षेत्र की शालाओं में भिन्न–भिन्न समस्याएँ हैं। इन क्षेत्रों में शिक्षा सम्बन्धी विशेष जागरूकता व सुविधा उपलब्ध कराने को आवश्यक बताया है।

उद्देश्य :

(1) ग्रामीण व शहरी क्षेत्र में स्थापित प्राथमिक शालाओं की समस्या व उनका विद्यार्थियों की शैक्षणिक स्तर पर प्रभाव का अध्ययन करना है।

(2) इसके अतिरिक्त विद्यार्थियों के प्रति शालाओं का शैक्षणिक वातावरण, शैक्षणिक व्यवस्था को ज्ञात करना है।

परिकल्पना :

(1) विभिन्न प्राथमिक शालाओं के विद्यार्थियों के शाला सम्बन्धी समस्याओं का शैक्षणिक उपलब्धि पर कोई प्रभाव नही पड़ता है।

(2) विद्यार्थियो की शैक्षणिक स्तर में कोई सार्थक अंतर नही होता है।

चर : प्रस्तुत शोध हेतु शोधार्थी द्वारा उपरोक्त कार्य हेतु विभिन्न चर लिए गए हैं :

(1) **स्वतंत्र चर :** शाला सम्बंधित वातावरण/ शाला सम्बंधित समस्याएँ।

(2) **आश्रित चर :** शैक्षणिक उपलब्धि।

(3) **नियंत्रित चर :** विभिन्न प्राथमिक शालाओं के विद्यार्थी।

न्यादर्श एवं सीमांकन :

शोधार्थी द्वारा प्रस्तुत शोध कार्य हेतु छतरपुर जिले के विभिन्न प्राथमिक शालाओं की समस्या व शैक्षणिक स्तर के प्रभाव के अध्ययन के लिए विभिन्न शासकीय व अशासकीय अनुदान प्राप्त शालाओं के हिंदी माध्यम विद्यालयों में से 10 विद्यालयों का चयन किया गया है, जिसमें से कुल 300 विद्यार्थियों को चयनित किया गया है। इन चयनित शालाओं में से प्रत्येक शाला के कक्षा 1 से 5 वीं तक के 30 से 35 विद्यार्थियों को आधार मानकर उनका लॉटरी विधि से चयन कर कुल 300 विद्यार्थियों को न्यादर्श स्वरुप लिया गया है, जिसमें 200 छात्र व 100 छात्राएँ शामिल हैं।

अध्ययन पद्धति :

शोधार्थी द्वारा प्रस्तुत शोध कार्य में उपर्युक्त विषय की समस्या के निराकरण हेतु निदर्शन विधि का प्रयोग किया गया है।

निदर्शन विधि :

समग्र में से चुने गए ऐसे कुछ जो समग्र का उचित प्रतिनिधित्व करते हैं, तो उसे निदर्शन विधि कहते है। इस प्रणाली के अंतर्गत सम्पूर्ण समूह की प्रत्येक इकाई के बारे में सूचना प्राप्त नहीं की जा सकती, परन्तु कुछ इकाइयों को प्रतिनिधित्व इकाइयों के रूप में चुन लिया जाता है। इस प्रकार चुनी हुई या ली हुई इकाइयों का अनुसन्धान या अध्ययन करने पर जो निष्कर्ष प्राप्त होते हैं, उन्हें ही समस्त समूह के प्रतिनिधित्व निष्कर्ष मान लिए जाते हैं।

अतः इस प्रणाली द्वारा एक विस्तृत क्षेत्र सीमित हो जाता है और यही कारण है की इस अध्ययन पद्धति की सहायता में सीमित साधनों के द्वारा ही विस्तृत क्षेत्र का गहन अध्ययन संभव होता है।

कारक :

प्रस्तुत शोध में शोधार्थी द्वारा निदर्शन विधि के अंतर्गत प्राथमिक शालाओं की समस्याओं एवं शैक्षणिक स्तर के अंतर्गत विद्यार्थियों द्वारा दिए गए उत्तरानुसार निम्नलिखित कारक साक्षात्कार के रूप में प्राप्त किए गए हैं, जो कि विद्यार्थियों के शैक्षणिक स्तर को विभिन्न प्राथमिक शालाओं की समस्या द्वारा प्रभावित करते हैं, जिसे शोधार्थी ने शोध हेतु उपकरण के रूप में प्रयोग किया है।

उपकरण :

(1) शिक्षकों की कमी।
(2) शैक्षणिक जानकारियाँ।
(3) शाला भवन सम्बन्धी समस्याएँ।
(4) गैर शैक्षणिक कार्य।
(5) अभिभावकों में जागरूकता की कमी।
(6) शैक्षणिक स्तर में बदलाव।

शासकीय प्राथमिक शालाओं की समस्याएँ :

(1) शिक्षकों की कमी : शिक्षकों की कमी होने से विभिन्न शैक्षणिक गतिविधियों का संचालन सफलतापूर्वक नही हो पाता है। शासन द्वारा निर्धारित छात्र अनुपात शिक्षक (30:1) सैद्धांतिक रूप से उचित हो सकती है, किन्तु व्यवहारिक रूप से ठीक नहीं लग रहा है। एक ही शिक्षक द्वारा विभिन्न शैक्षणिक कलाओं व गतिविधियों की अपेक्षा की जाती है, जो की न्यायसंगत नहीं है।

(2) शैक्षणिक जानकारियाँ : उच्च कार्यालय द्वारा वर्ष भर प्रत्येक शालाओं से वहाँ की दर्ज–संख्या, गणवेश व पुस्तक, मध्यान्ह् भोजन, जन्म–मृत्यु, आधार संख्या, वहां कार्यरत कर्मचारियों व शाला की भौतिक संसाधनों इत्यादि सम्बंधित जानकारियों की मांग की जाती है, जिसे किसी एक शिक्षक द्वारा पूर्ण कर जमा किया जाता है।

(3) शाला भवन सम्बन्धी समस्याएँ : वर्तमान में शाला भवन समय से पहले जर्जर हो जाता है तथा असुविधापूर्ण है। सबसे बड़ा दोष यह है, कि सभी कक्षाएँ एक ही स्थान पर नहीं होती हैं। अलग–अलग भवन में कक्षों का निर्माण अलग से नहीं किया जाता है।

(4) गैर शैक्षणिक कार्य : शासन द्वारा सरकारी शिक्षकों को गैर शैक्षणिक कार्य जैसे– मतदान अधिकारी, प्रशिक्षणकर्ता, विभिन्न सर्वेकर्ता आदि के रूप में अस्थाई रूप से नियुक्त करता है, जो शैक्षणिक कार्य को अति प्रभावित करता है।

(5) अभिभावकों में जागरूकता की कमी : शासकीय शालाओं में अध्ययनरत विद्यार्थियों के पालक अपने बच्चों की गतिविधियों को जानने का प्रयास भी नहीं करते हैं।

प्रदत्तों का वर्गीकरण एवं विश्लेषण :

तालिका 1 : शासकीय प्राथमिक शालाओं की समस्याएँ उत्तरदाता की संख्या : 300 (200 छात्र एवं 100 छात्राएँ)

क्र.	शासकीय प्राथमिक शालाओं की समस्याएँ	आवृत्ति	प्रतिशत
1	शिक्षकों की कमी	275	91.66
2	शैक्षणिक जानकारियाँ	220	73.33
3	शाला भवन सम्बन्धी समस्याएँ	105	35.00
4	गैर शैक्षणिक कार्य	260	86.66
5	अभिभावकों में जागरूकता की कमी	195	65.00
6	शैक्षणिक स्तर में बदलाव	265	88.33

तालिका 1 के अनुसार सर्वाधिक 91.66 प्रतिशत विद्यार्थियों एवं शिक्षकों के अनुसार शासकीय शालाओं में शिक्षकों की कमी है, जो की शैक्षणिक गतिविधिओं में बाधा पहुँचाती है और शैक्षणिक स्तर को भी प्रभावित कर रही है।

निष्कर्ष :

उपर्युक्त समस्याओं के कारण ग्रामीण क्षेत्रों की प्राथमिक शालाओं में शिक्षण का स्तर गिरता जा रहा है, इन सभी समस्याओं के सम्मिलित प्रभाव से विद्यार्थियों के शैक्षिणिक स्तर पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ रहा है। कुछ शालाओं में बच्चों के दर्ज संख्या की अपेक्षा शिक्षक की कमी है, जिससे वहाँ के विद्यार्थियों की प्रतिदिन की शैक्षणिक गतिविधिओं में रुकावट आती है। जब शिक्षक गैर शैक्षणिक कार्य करेंगे, तो अध्यापन कार्य कौन करवाएगा ? प्राथमिक शालाओं में विशेषज्ञ शिक्षकों जैसे– ललितकला, सांस्कृतिक और खेल–कूद व व्यायाम शिक्षक की पूर्णतः कमी बनी हुई है, इसी प्रकार शाला में भवनों की संख्या, अभिभावकों में जागरूकता की कमी तथा शैक्षणिक गतिविधियाँ विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास को प्रभावित करती है।

सुझाव :

(1) छात्र–शिक्षक अनुपात को कम कर लगभग 25:1 किया जाना चाहिए, ताकि शिक्षक अपनी कक्षा के सभी बच्चों पर ध्यान केन्द्रित कर सकें व नियमित अध्यापन करा सके।

(2) अधिक दर्ज संख्या वाली शालाओं में शिक्षक सह–लिपिक हों, ताकि वह शैक्षणिक कार्य के साथ गैर शिक्षकीय कार्य सम्पादित कर सके व अन्य गतिविधिओं का संचरण नियमित रूप से कर सके।

(3) प्राथमिक शालाओं के भवनों की ऐसी सरंचना होनी चाहिए, कि दो या तीन शिक्षक भी सभी कक्षाओं को नियंत्रित कर सके।

(4) अभिभावकों को शाला में आने के लिए बार–बार प्रेरित करना चाहिए, ताकि वे अपने बच्चों की गतिविधिओं से परिचित हो सके। अभिभावक को प्रतिदिन अपने बच्चे की जानकारी समय–समय पर लेते रहना चाहिए।

(5) शाला और घर पर बच्चों के लिए आनन्दमयी रूप से शैक्षिणिक वातावरण का निर्माण करना चाहिए, ताकि बच्चे अध्यापन कार्य को बोझ न समझें।

सन्दर्भ :

(1) बघेल, कुमार (2014) : विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों एवं व्यक्तित्व का उनके शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन, पी–एच.डी. शोध–प्रबंध, पं.रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर (छ. ग.)।

(2) पटेल, सच्चिदानंद (शोधार्थी), संयुक्त शोध प्रबंध एम.ए. शिक्षा, महात्मा गाँधी की चित्रकूट ग्रामोदय विद्यालय चित्रकूट, पृष्ठ 4, सत्र 2007–2008.

(3) सिंह रामपाल, शर्मा रमेशचंद्र, सेवसी अशोक, सिंह नागेन्द्र : भारत में शिक्षा प्रणाली और विद्यालय प्रबंध, पृष्ठ 254, प्रथम संस्करण, 2012–13.

(4) मुकर्जी, डॉ.एस.एन. : एजुकेशन इन इंडिया, टुडे टूमारो, पृष्ठ 124.

(5) एम.सुधिश (2004) : ए स्टडी ऑफ द प्रोब्लम्स इन द इम्प्लिमेंटेशन ऑफ डिस्ट्रीक्ट प्राईमरी एजुकेशन प्रोग्राम एंड इट्स सालुशन, पी.एच.डी.शोध–प्रबंध, पं.रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)।

(6) शर्मा.,श्रीमती तृषा (2013) : सरस्वती शिशु मंदिर तथा शासकीय विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों की बुद्धि व्यक्तित्व मूल्य था शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन, पी.एच.डी. शोध–प्रबंध, पं.रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)।

(7) शर्मा.गौरी (2014) : एकेडमिक एचीवमेंट इन रिलेशन टू क्लासरूम इन्वायरमेंट ऑफ रूरल एंड अरबन स्टूडेंट ऑफ छतीसगढ़ पी.एच.डी. शोध–प्रबंध, पं.रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर (छ. ग.)।

❁❁